①

छायावादी कविता और रहस्यवाद

स्नातक भाग - 3
हिन्दी (प्रतिष्ठा)
पंचम पत्र

छायावादी कविता के परिप्रेक्ष्य में रहस्यवाद की चर्चा के क्रम में यह प्रश्न सहज ही उठता है कि 19वीं शताब्दी के भारतीय नवजागरण और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में भारत पहुँची स्वच्छन्दतावादी चेतना की पृष्ठभूमि में आकार ग्रहण करने वाली छायावादी कविता कैसे जीवन जगत के यथार्थ से दूर हटकर रहस्यलोक में विचरण करने लगती है? यह जिज्ञासा ही नहीं, चिंतन का भी विषय है। इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए बंगाल और ईसाई 'मिशनरी समाज' की ओर जाने की जरूरत नहीं। इसके लिए भारतीय नवजागरण आंदोलन की प्रकृति और छायावादी कवियों की जटिल मनःस्थिति

को समझना होगा। जो एक ओर स्वच्छन्दतावाद से प्रेरणा ग्रहण करते हैं तो दूसरी ओर सामाजिक जीवन की यथार्थ से टकराने के क्रम में सामाजिकता के दबाव को नकार पाने में खुद को असमर्थ महसूस करते हैं। स्थिति स्थिति में या तो वे अपनी अनुभूतियों को आध्यात्मिकता के आवरण में प्रस्तुत करते हैं या स्वच्छन्दतावादी कल्पनाशीलता का सहारा लेकर सामाजिक यथार्थ के विषम ताप से बचने के लिए कल्पनाशीलता के सहारे एक नए लोक की ओर प्रस्थान करते हैं, उस लोक की ओर जो अज्ञात है, जिससे उनका परिचय नहीं। अपरिचय ही इस लोक के प्रति आकर्षण का मूल कारण है इन्हें लगता है - शायद वह लोक इस लोक से बेहतर होगा।

यही कारण है कि पंत जी के
यहाँ बालसुलभ जिज्ञासा रहस्यवाद की
पृष्ठभूमि तैयार करती है।–

"न जाने नक्षत्रों से कौन
निमंत्रण देता मुझको मौन।"

महादेवी उस अज्ञात के प्रति निमंत्रण को
ठुकरा नहीं पातीं। उनका मन उस अज्ञात
को जानने के लिए मचलने लगता है और
धीरे धीरे यह आकर्षण बेचैनी में
परिणत हो जाता है –

"फिर विकल हैं प्राण मेरे!
तोड़ दो यह क्षितिज मैं भी देख लूँ
उस पार क्या है?
जा रहे जिस पंथ से युग
कल्प उसका छोर क्या है?

प्रसाद तो कल्पना की नाव पर सवार होकर
कल्पना को ही नाविक बना डालते हैं। और
फिर उससे आग्रह कर बैठते हैं –

"ले चल मुझे भुलावा देकर,
मेरे नाविक धीरे-धीरे।
जिस निर्जन में सागर लहरी
अंबर के कानों में गहरी
निश्छल प्रेम कथा कहती हो
तज कोलाहल की अवनी रे।"

शायद औपनिवेशिक पराधीनता के बंधन में जकड़े भारतीय समाज के विद्रूप यथार्थ ने छायावादी कवियों को बेचैन कर रखा था। वे यथार्थ के इस विषम ताप को सह पाने में खुद को असमर्थ महसूस कर रहे थे और अंततः परिस्थितियों ने उन्हें पलायन के लिए विवश किया। लेकिन यह पलायन साधन बनकर आता है - अपनी रचनात्मक ऊर्जा को एकत्रित करने का। इसीलिए छायावादी कवि देर तक उस कल्पनालोक में नहीं टिकते। पंत की कैशोर्य जिज्ञासा प्रसाद के यहाँ कौतूहल का रूप धारण कर लेती है -

"शशि मुख पर घूँघट डाले,
अँचल में दीप छिपाए,
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आए।"

प्रसाद के यहाँ यह कौतूहल भविष्य के लिए आश्वासन बन जाता है इसने उन्हें यथार्थ के विषम चित्रण के लिए विवश किए —

"अपने इस सूनेपन की
मैं हूँ रानी मतवाली,
प्राणों का दीप जलाकर
करती रहती दीवाली।"

कबीर के यहाँ जीव यदि शरीर को दीपक बनाकर प्रियतम के इंतजार में पलक बिछाता है तो महादेवी प्राणों की लौ से सूनी आँखों को सजाकर प्रियतम के इंतजार में पलकें बिछाती हैं। उनका प्रियतम आता भी है लेकिन तम के पर्दे में :- "मेरे करुणामय को भाता है,
तम के पर्दे में आना।"

⑥

इससे साफ हो जाता है कि—
छायावादी रहस्यवाद की प्रेरणा लौकिक है
मानवीय और सांस्कृतिक है। इसलिए इसका
संबंध तद्युगीन राष्ट्रीय सांस्कृतिक परिस्थितियों
से भी जुड़ता है। यह सांस्कृतिक प्रेरणा ही
थी। जिसने निराला को प्रकृति का दैवीकरण
करते हुए भारत माता को प्राकृतिक-सांस्कृतिक
चित्र खड़ा करने के लिए प्रेरित किया :-

"तुम तुंग हिमालय शृंग,
और मैं चंचल गति सुर सरिता
तुम विकल हृदय उच्छ्वास,
मैं कांति कामिनी कविता।"

यह आध्यात्मिक-सांस्कृतिक प्रेरणा ही
थी जिसने प्रसाद के मनु को श्रद्धा के साथ
कैलाश पर जाने के लिए और वहाँ पर
पहुँचकर समरसतावाद की स्थापना के लिए
उत्प्रेरित किया। इसी प्रेरणा ने निराला
के राम को मौलिक शक्ति की कल्पना
करने के लिए प्रेरित किया। इस मौलिक

शक्ति की कल्पना में प्रकृति और संस्कृति मिलजुल जाते हैं। इस क्रम में 'राम की शक्ति पूजा' के आध्यात्मिक रहस्यवाद का संबंध प्रतीकात्मकता के धरातल पर साधनात्मक रहस्यवाद से भी जुड़ता है। राम का मन छः चक्रों को भेदता हुआ सहस्त्रार चक्र में प्रवेश कर जाता है। लेकिन दोनों जगह आध्यात्मिक रहस्यवाद का आधार दोनों रचनाओं को मानवतावादी चेतना प्रदान करता है।